शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2013

शरद जोशी का व्यंग्य साहित्य: एक अध्ययन
(यथा संभव के संदर्भ में)

प्रो.पुष्पेंद्र दुबे
महाराजा रणजीतसिंह कालेज ऑफ़ प्रोफेशनल साइंसेस
खण्डवा रोड, इन्दौर

शोध संक्षेप

आधुनिक हिन्दी साहित्य की उल्लेखनीय घटना व्यंग्य है। बीसीवीं शताब्दी के हिन्दी गद्य में अनेक शैलियों, जीवन-दृष्टियों और विधाओं का प्रादुर्भाव और विकास हुआ। एक तो ऐसा पश्चिम के साहित्य के सम्पर्क के कारण हुआ और दूसरा आधुनिक जीवन पर पड़ने वाले विभिन्न सांस्कृतिक, राजनैतिक और सामाजिक दबावों के कारण। मानव चरित्र की दुर्बलताओं को उजागर कर उन पर प्रहार करते हुए समाज के खोखलेपन का पर्दाफाश करना ही व्यंग्य के मूल भाव में निहित है। प्रस्तुत शोध पत्र में शरद जोशी के व्यंग्य साहित्य 'यथासंभव' में संगृहीत रचनाओं में मनुष्य जीवन की विडंबनाओं और विसंगतियों के सूत्रों को खोजा गया है।

व्यंग्य का स्वरूप

अंग्रेजी के बहुप्रचलित शब्द सेटायर का हिन्दी अनुवाद है व्यंग्य। "सेटायर का जन्म दृश्य काव्य से हुआ। इसका विकास लैटिन भाषा के 'सेतूरा' शब्द से हुआ है। पुराने जमाने में 'सेतूरा' शब्द से आशय पर-निंदा से लिया जाता था। आज सेटायर शब्द का प्रयोग समाज में छिपी बुराइयों और विसंगतियों को उजागर करने के लिए किया जाता है। रोमन्स और यूनानी दोनों ही अपने को इसका जन्मदाता मानते हैं। जूलियर स्केलिगर तथा हैसियत जो यूनानी विद्वान हैं, उनका कहना है कि रोमन्स ने इसे यूनान से प्राप्त किया तथा 'रिगलशियस' और कैसाबन जो रोमन विद्वान हैं, वे कहते हैं यूनान ने उनसे इसे प्राप्त किया है। सर्टरस एक विचित्र प्रकार का जन्तु होता है जिसके आधार पर इसका नामकरण हुआ।"**1** व्यंग्य एक ओर विसंगतियों, विडंबनाओं पर प्रहार करता है तो दूसरी ओर उसके व्यंग्य-विनोद में प्रहार के साथ-साथ हंसी, मजाक और हल्का-फुल्कापन भी मिलता है। यों भी हंसते-हंसते यथार्थ और कड़वी बात कह जाना अपने आप में एक कला है। व्यंग्य के लिए यथार्थ ही यथेष्ट विषय है। विसंगति व्यंग्य का मूल आधार है। प्रारंभिक काल में रंगरेलियों, हंसी-दिल्लगी, तुक्कड़बाजी आदि जो पद्य में होने लगी थीं को नकलों में प्रस्तुत करते थे। उर्दू में इसे हजो कहते हैं। अरब में हजो के नियम थे: केवल उन्हीं वस्तुओं तथा बातों पर हो जो स्वतः ऐसी घृणित और तिरस्कार के योग्य हों, अपने पूर्वजों पर कदापि न हो, सत्य व स्वाभाविक हो कि जल्द समझ में आ जाये और प्रभाव पड़े।"**2** भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने व्यंग्य की परिभाषा अपने-अपने ढंग से दी है। कई विद्वानों ने व्यंग्य को हास्य के एक प्रभेद के रूप में स्वीकार किया है। इस बारे में नरेंद्र कोहली लिखते हैं, "कुछ अनुचित, अन्यायपूर्ण अथवा

गलत होते देखकर जो आक्रोश लगता है - वह यदि काम में परिणत हो सकता तो अपनी असहायता में वक्र होकर जब अपनी तथा दूसरों की पीड़ा पर हंसने लगता है तो वह विकट व्यंग्य होता है, पाठक के मन को चुभलाता-सहलाता नहीं कोड़े लगाता है। अतः सार्थक और सशक्त व्यंग्य कहलाता है।"**3**

वास्तव में व्यंग्य असत्य को सहन नहीं कर पाता। मिथ्या और बनावट से उसे बैर होता है। अतः लेखक सांकेतिक शब्दों का सहारा लेकर उस असत्य आडम्बर पर सांकेतिक शब्दों से ऐसा प्रहार करता है कि सुनने वाला तिलमिलाकर रह जाता है। व्यंग्यकार सामाजिक दुर्बलताओं को सामने लाता है।

हिन्दी गद्य में व्यंग्य परंपरा

हिन्दी में व्यंग्य परंपरा बहुत पुरानी है। जो समाज अपने मूल्यों को निरंतर विश्लेषित करने की क्षमता रखता है वही रुढियों का अतिक्रमण कर आगे बढ़ सकता है। इस प्रक्रिया में साहित्यकार के पास व्यंग्य सबसे बड़ा उपकरण होता है। जिस युग और जिस समाज में अंतर्विरोध जितने अधिक और जितने दुर्दम होंगे, व्यंग्यकार की उतनी अधिक आवश्यकता होगी। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य के जन्म के दिनों में उसे नाथों और सिद्धों का साहित्य मिला। इन नाथों-सिद्धों ने जाति-पांति के छुआछूत पाखण्ड पर प्रहार किए। कबीर इसी श्रृंखला की एक कड़ी हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कबीर के मस्ती, फक्कड़पन स्वभाव और सब कुछ को झाड़ फटकार कर चल देने वाले तेज ने कबीर को हिन्दी साहित्य का अद्वितीय व्यक्ति बना दिया। प्रो.के.के.जैन ने ठीक ही कहा है कि कबीर को पढ़ने के बाद हम ठीक वही नहीं रह जाते, जो हम कबीरदास पढ़ने के पहले होते हैं। कबीर हिन्दी के पहले विध्वंस विशेषज्ञ हैं। हिन्दी का रीतिकाल और परवर्ती मुगलकाल समस्याओं की आंच निःशेष हो जाने का काल है। यह आंच फिर से भारतेंदु ने सुलगाई। इससे भारतेंदु की मुकरियों और बालमुकुंद गुप्त के 'शिवशम्भू के चिट्ठे' का जन्म हुआ। अंग्रेजों और जमींदारों के द्वारा भारत की आम जनता के साथ शोषणमूलक समस्याओं को उजागर करने का काम प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों और कहानियों में किया। निराला अपने काव्य में व्यंग्य के द्वारा समाज में नयी चेतना जाग्रत करने का प्रयास कर रहे थे। हिन्दी के प्रयोगवादी काव्य में भी व्यंग्य के स्वर सुनायी पड़ते हैं। हिन्दी में भारतेंदु हरिशचंद्र, बालमुकुंद गुप्त, निराला, हरिशंकर परसाई, श्रीलाल शुक्ल, रवींद्रनाथ त्यागी, नरेंद्र कोहली, बरसानेलाल चतुर्वेदी, ज्ञान चतुर्वेदी, शरद जोशी मुख्य हैं।

शरद जोशी : परिचयात्मक दृष्टि

प्रखर लेखनी के धनी श्री शरद जोशी का जन्म 21 मई 1931 को उज्जैन में हुआ। आपके पिता श्रीनिवास जोशी बेहद मिलनसार और सुरुचि संपन्न व्यक्ति थे। शरद जोशी की प्रारंभिक शिक्षा उज्जैन, नीमच और देवास में हुई। उसके बाद होलकर कालेज इन्दौर से उन्होंने बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। संघर्ष और स्वाभिमान के धनी श्री जोशीजी ने व्यंग्य के माध्यम से सन् 1953 में इन्दौर के प्रसिद्ध दैनिक 'नईदुनिया' समाचार पत्र में 'परिक्रमा' से लेखन कार्य आरंभ किया। इससे उन्हें हिन्दी जगत में युवा व्यंग्यकार का स्थान प्राप्त हुआ। लेखन कर्म के विषय में शरद

जोशी का यह कथन है, "जब गद्य लेखन में मेरी रुचि बढ़ी अर्थात् सन् 48 के बाद अपेक्षाकृत तेजी से, उन दिनों मैंने जिन लेखकों को पढ़ा वे थे चेखव, यशपाल, गोर्की, मोपांसा, बालजक, प्रेमचंद, ओ हेनरी, कृष्नचंदर, मंटो, शरत, रवींद्र, सामरसेट मॉम और ताल्स्तॉय। इनमें ताल्स्तॉय को अपनी खानदानी जमीन से कुछ कमाई होती थी। शेष सारे लेखकों के विषय में मुझे यह सोच ठीक ही लगता था कि उनकी जीविका लिखने से चलती है। मैंने जब सोचा, क्यों नहीं मैं भी लिखकर ही जीऊं ?.....मैं मालवा के एक मध्यवर्गीय ब्राह्मण परिवार का लड़का, इससे अधिक सोचता भी क्या ? जब मैं 'नईदुनिया' इन्दौर में सप्ताह में तीन की गति से कॉलम लिखता था, मुझे तीस रुपये प्रतिमाह मिलते थे। अर्थात माह में बारह कॉलम के प्रति कॉलम ढाई रुपये। कहानी लिखने पर बारह रुपये प्राप्त होते थे। यह 1952-54 की बात है। तब मेरा प्रतिदिन का खर्च था एक रुपया। इसमें दो-तीन दिन का खर्च बचाकर एकाध किताब खरीद लेने की अय्याशी भी शामिल थी।"**4** 'नईदुनिया' में प्रकाशित लेखों का संग्रह 'परिक्रमा' सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। सन् 1955 में आकाशवाणी इन्दौर में पाण्डुलिपि लेखक के रूप में कार्य किया। सन् 1956 से 1966 के दौरान उन्होंने मध्यप्रदेश सूचना विभाग में नौकरी की। सरकारी नौकरी छोड़ने के बाद लेखन के सहारे ही उनका काम चला। सन् 1960 के दशक में उन्होंने साप्ताहिक 'धर्मयुग' में 'बैठे ठाले' में स्तंभ लिखना शुरू किया। यहीं से व्यंग्य लेखन के क्षेत्र में उनका नाम महत्वपूर्ण हो गया। श्री शरद जोशी चूंकि एक व्यंग्यकार थे और समाज की रुढियों, विसंगतियों, विद्रूपताओं को अपने लेखन के माध्यम से पाठक वर्ग तक पहुंचाते रहे। उन्होंने सामाजिक विरोध के बावजूद सन् 1960 में शाजापुर में रहने वाली मुस्लिम लड़की इरफाना से विवाह किया। सन् 1980 में जोशीजी हिन्दी एक्सप्रेस के संपादक बने किंतु यह पत्रिका चल नहीं पायी। अप्रैल 1985 में उन्होंने प्रसिद्ध दैनिक 'नवभारत टाइम्स' में 'प्रतिदिन' नाम से स्तंभ लेखन का का कार्य किया जो मृत्युपर्यंत चलता रहा। 1985 में भारतीय ज्ञानपीठ ने उनके सौ चुने हुए व्यंग्य लेखों का संग्रह 'यथासंभव' छापा। उनकी अन्य रचनाएं हैं: परिक्रमा, किसी बहाने, जीप पर सवार इल्लियां, तिलिस्म, रहा किनारे बैठ, दूसरी सतह, और पिछले दिनों। शरद जोशी ने व्यंग्य निबंधों के अलावा नाटक भी लिखे: अंधों का हाथी और एक था गधा उर्फ अल्ला दाद खां। जितनी सफलता के साथ जोशीजी ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लिखा उतनी ही सफलता उन्हें आधुनिक जगत के लोकप्रिय माध्यम फिल्म और टीवी धारावाहिक लिखने में भी मिली। सरकारी नौकरी छूटने के बाद उन्होंने बम्बई जाने का का संकल्प लिया। इस संबंध में उनका कथ्य है, "भोपाल में एक अफसर से झगड़ा होने के बाद मुझे झुकाने के लिए साजिश की तरह मेरी आय के सारे दरवाजे बंद कर दिए गए। मैंने तय किया कि चलो, बंबई चलें। वहां लिखेंगे। अखबारों में लिखेंगे, फिल्मों के लिए लिखेंगे। क्षितिज, चोरनी, छोटी-सी बात, गोधूली, उत्सव जैसी फिल्मों में उन्होंने संवाद और पटकथाएं लिखीं। दूरदर्शन के लिए लिखने वालों में हिन्दी के दो साहित्यकार विशेष रूप से सफल हुए एक तो मनोहर श्याम जोशी दूसरे शरद जोशी। यह जो है जिंदगी,

विक्रम और बेताल जैसे सफल टीवी सीरियल लिखे। अनार के दाने उनका अंतिम टीवी धारावाहिक था, जो दूरदर्शन से प्रसारित हुआ। अपने जीवन के आखिरी दौर में शरद जोशी तीन कार्य कर रहे थे दूरदर्शन के लिए नियमित लेखन, नवभारत टाइम्स के लिए प्रतिदिन जैसे स्तंभ का लेखन और कवि सम्मेलनों में रचना पाठ। 26 जनवरी 1991 को भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री की उपाधि से सम्मानित किया। पद्मश्री से सम्मानित होने के बाद जब उनसे पूछा गया कि आपको पद्मश्री पुरस्कार मिलने पर आपके आलोचक क्या सोचते हैं ? तब उन्होंने मुस्कराते हुए अपनी चिर परिचित शैली में जवाब दिया था, मेरे आलोचक ही सोचते होंगे कि पद्मश्री का स्तर गिर गया है। पद्मश्री से सम्मानित होने के बाद 17 सितंर 1991 को मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति इन्दौर में उनका सम्मान किया गया। श्री शरद जोशी ने अपने व्यंग्य लेखन के संबंध में कहा था कि जब ईश्वर आपके साथ मजाक करने ही लग जाए तो आप इस संसार के चाहे कितने ही बड़े मसखरे हों, आपको अपनी योग्य बड़बड़ाहट को कुछ समय रोक देना चाहिए और खिसियाकर रह जाना चाहिए। शरद जोशी ने 5 सितंबर 1991 के नवभारत टाइम्स के 'प्रतिदिन' स्तंभ में 'बेडरेस्ट' शीर्षक से जो व्यंग्य लिखा वह आराम पाठक जगत के लिए बहुत बुरा साबित हुआ। 'बेडरेस्ट' कॉलम में उन्होंने लिखा, "जब मैने देखा कि मैं बीमार हो गया हूं और मैं डॉक्टर की तरफ नहीं देख रहा हूं, डॉक्टर मेरी तरफ नहीं देख रहे हैं तो मैंने अपनी पराजय स्वीकार कर ली और स्वयं को दवाइयों के प्रति समर्पित कर दिया। पीड़ा इतनी घनीभूत थी और इतने दिनों लगातार कि हर रात मुझे लगता कि कल की सुबह शायद न देख सकूं।" उनकी मृत्यु पर यशवंत व्यास ने लिखा, "जनभाषा और खास तेवरों की वजह से सच्चे अर्थों में जनप्रिय साहित्यकार शरद जोशी की अहमियत सिर्फ हमारे जेहन में नहीं है कि वे हमारे दिल की लिखते थे, बल्कि इसलिए भी है कि वे हमारे जैसे थे। जीवनी के लिहाज से 1931 में जनमना और खबर के लिहाज से 1991 में चले जाना छः दशक के इस मामूली काल में इन्दौर से भोपाल, बंबई, फिर बंबई से हर गली, हर घर और हर आदमी तक शरद जोशी का पहुंचना एक गैर मामूली कहानी है। व्यंग्यकार की मृत्यु तो कभी होती नहीं। वह उन तमाम रचनात्मक हथियारों को समाज के लिए थमाता जाता है जिनसे समाज की आत्मा अपने जिंदा रहने का इंतजाम कर सके।"**5**

यथासंभव और शरद जोशी मनुष्य की कमजोरियां, उसकी बर्बरता, दुष्टता, स्वार्थपरता जब अपने नग्न रूप में खुलकर प्रकट होती हैं तो उनको पहचानना भी सरल होता है और उनका प्रतिकार भी सीधा होता है। सभ्यता के विकास के साथ जब वे ही कमजोरियां सभ्यता के आवरण में शिष्टाचार, साक्षरता, आडम्बर के आवरण में छिपकर प्रकट होने लगती हैं तब उनको पहचानना भी सुगम नहीं होता और उनका प्रतिकार भी सीधा-सरल नहीं होता। स्वातंत्र्योत्तरकालीन व्यंग्य साहित्य में परिवेशगत विभिन्न छद्मताओं का उद्घाटन हुआ है। इसे देखकर लगता है कि आज मनुष्य के जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं रह गया है जो विकृत-विरूप होने से बचा हो।

राजनेताओं पर प्रहार करते हुए जोशीजी लिखते हैं, "वह पूरे समय नवदौलतियों के लिए अतिरिक्त कमाई की साधन-सुविधा उत्पन्न करने का आंदोलन चलाता है। वह ऐसी समस्याएं उत्पन्न करता है जिनके कारण कोई रुपया बिना मझोलियों के मार्फत गरीबों तक नहीं पहुंच पाता। सारे काले धंधों को स्थानीय नेता का अभयहस्त मिलता है।"**6**

जोशीजी चुनाव को आपसी समझ-बूझ पर आधारित खेल मानते हैं। "इस पार्टी के हों या उस पार्टी के, सत्ता में बैठे हों या विरोध में - सब एक ही सिगड़ी से बदन सेंकते रहते हैं पांच साल। सूचना यह मिलती है कि लड़ाई चल रही है, सच्चाई यह है कि सामूहिक नृत्य हो रहा है। जहां सिर फुटौवल का अंदेशा था वहां परस्पर सेहरे बंधने की रस्म होती नजर आती है।"**7**

'चुनाव गीतिका सरलार्थ' में शरद जोशी ने प्रजातंत्र में जनता की उस स्थिति पर व्यंग्य कसा है जो उसे नेताओं के हाथों की कठपुतली बनाती है। "अरी जनता, अब तू बहुत मान न कर। सब कुछ उसी के वश में है, तेरे वश में सिवाय वोट देने के कुछ भी नहीं। उन चतुर खिलाड़ियों से जीतना कठिन है।"**8**

इस देश में नेता ऐसे पैदा होते हैं, जैसे उनकी खेती की जा रही हो। यही जनता को हर पांच साल में यह अहसास कराते हैं कि इस देश में प्रजांतत्र है। जोशीजी ने इस संबंध में लिखा है, "देश की धरती पैदा करना जानती है। नेताओं को ही लीजिए - गांव, तहसील और प्रांत के स्तर के नेताओं की जब जहां जरूरत होती है, वह वहां पैदा होता है। आजादी के बाद डर लग रहा था कि नये नेता कहां से मिलेंगे ? कोई कमी नहीं। यह फिक्र थी कि गांधीजी न रहे, अब क्या होगा ? कुछ नहीं हुआ।"**9**

'जीप पर सवार इल्लियां' में जोशीजी लिखते हैं, "ये सिर्फ चना ही नहीं खा रही सब कुछ खाती हैं और निष्कंप जीपों पर सवार चली जा रही हैं।"**10**

भारत का प्रशासन फाइलों के इर्दगिर्द घूमता है। दफ्तर में बिना फाइल के काम नहीं चल सकता। फाइल की चाल पर व्यंग्य करते हुए जोशीजी लिखते है, "हर फाइल की चाल का अपना नाजुक अंदाज होता है। नितंबिनी। कैसे हिलती-हिलाती बढ़ती है। कहां ठिठक जाए, कब मुड़कर देखने लगे, कब सर्र से चली जाए, कहां पसर जाए, कब लौट आए, कब तक रमती रहे, कौन चिपका ले, कौन बगल में दाबे जाता नजर आए नहीं कह सकते।"**11** जिस प्रकार कबूतरबाजी, पतंगबाजी, पत्तेबाजी, शतरंजबाजी होती है उसी प्रकार दफ्तरों में फाइलबाजी होती है। इस फाइलबाजी पर व्यंग्य करते हुए जोशीजी ने लिखा है, "महाभारत फाइलों में चलता तो आज तक न निपटता। कौरव-पाण्डव कबके रिटायर हो जाते।.....चौदह साल बीत जाते, राम के वन-प्रवास के आदेश निकल नहीं पाते।"**12** इस देश में जितना काम हो रहा है, वह सब फाइलों की माया के कारण ही हो रहा है। फाइलें न होती तो काम होता दिखाई नहीं देता। फाइल है, उसका मतलब काम हो रहा है। काम नहीं हो रहा है याने उसकी फाइल नहीं है। फाइल के चरित्र का वर्णन करते हुए जोशीजी लिखते हैं, "फाइल का अपना सौंदर्य है बाबू। घूंघट की लाज रखना पड़ती है। उसे उठाने का हक कमीशान का होता है। बेला आ गयी आज। उठा और खोल दे।"**13**

व्यंग्यकारों ने देश में फेले भ्रष्टाचार पर खूब निशाना साधा है। जितनी उद्भावानएं भ्रष्टाचार को लेकर मिलती है, उतनी और किसी में नहीं। शरद जोशी ने भ्रष्टाचार पर निशाना साधते हुए लिखा है, "देश के आर्थिक नंदन कानन में कैसी क्यारियां पनपी-संवरी हैं, भ्रष्टाचार की, दिनदूनी रात चौगुनी। कितनी डाल, कितने पत्ते, कितने फूल और लुक-छिपकर आती कैसी मदमाती सुगंध। यह मिट्टी बड़ी उर्वरा है, शस्य, श्यामल, काले करनों के लिए। दफ्तर-दफ्तर नर्सरियां हैं और बड़े बाग जिनके निगहबान बाबू, सुपरिटेंडेंट, डायरेक्टर। सचिव मंत्री। जिम्मेदार पदों पर बैठ जिम्मेदार लोग, क्या कहने, आई.ए.एस., विदेश रिटर्न, आजादी के आंदोलन में जेल जाने, चरखे के कतर्या, गांधीजी के चेले, बयालीस के जुलूस वीर, मुल्क का झंडा अपने हाथ से ऊपर चढ़ाने वाले, जनता के अपने, भारत मां के लाल, काल अंग्रेजन के, कैसा खा रहे रिश्वत गपागप। ठाठ हो गये सुसरी आजादी मिलने के बाद। खूब फूटा है पौधा सारे देश में, पनप रहा केसर क्यारियों से क्यारियों से कन्याकुमारी तक राजधानियों में, जिला दफ्तर, तहसील, बीडीओ, पटवारी के घर तक खूब मिलता है काले पैसे का कल्पवृक्ष, पीडब्ल्यूडी आरटीओ, चुंगीनाके, बीज गोदाम से मुनिसिपलिटी तक। साला कौन कहता है राष्ट्र में एकता नहीं, सभी जुटे है खा रहे हैं कुतर-कुतर पंचवर्षीय योजना, विदेश से उधार आया रुपया, प्रोजेक्टों के सूखे पाइपों पर फाइव-फाइव-फाइव पीते बैठे हंस रहे हैं, ठेकेदार, इंजीनियर, मंत्री के दौर के लंच-डीनर का मेनू बना रहे विशेषज्ञ ।"**14**

आजादी के बाद इस देश में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया। इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के प्रमुख उद्योगों को सरकार ने अपने पास रखा। साथ ही निजी क्षेत्र के उद्योगों को बढ़ावा देने की योजनाएं भी बनायी गयीं। लेकिन निजी क्षेत्र दिन-दूनी रात-चौगुनी तरक्की करता गया और सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयां लगातार घाटे में जाती रहीं। इस पर श्री शरद जोशी ने 'सरकार का जादू' में चुटीला व्यंग्य किया है। "कैसा है पब्लिक सेक्टर, साहबान, मुर्गी भी गायब हो गिया, अंडा रखा तो अंडा भी गायब हो गिया। थोड़ा जांच-इन्क्वायरी करना होगा। जादूगर मंच से उतरा। "सामने की पंक्ति में बैठे एक मिनिस्टर साहब की जेब से एक अंडा निकालकर दिखाया। कुछ दूर एक आईएएस अधिकारी बैठे थे, नाक से अंडा निकालकर दिखाया। कुछ दूर एक आइएएस अधिकारी बैठे थे, नाक से अंडा टपकाकर निकाला। थोड़ी दूर पर एक ट्रेड यूनियन नेता बैठे थे उनकी टोपी उठाकर अंडा उसमें से निकाला। एक इंजीनियर की बगल से निकाला। एक बाबू की जेब से निकला।"**15**

भ्रष्टाचार की स्वर लहरी पूरे देश में गूंज रही है। सभी के आपस में तार जुड़े हुए हैं। अगर कहीं गलती से अखबार वाले ने किसी के बारे में कुछ छाप दिया तो मुख्यमंत्री अपने मंत्रियों की और मंत्री अपने अफसरों की और अफसर बाबूओं की सफाइयां पेश करते हैं। जोशीजी लिखते हैं, "सारे सागर की मसी करें और जमीन का कागज फिर भी भ्रष्टाचार का भारतीय महाकाव्य अलिखित ही रहेगा।"**16**

राजनीतिक क्षेत्र के पाखण्ड ने आर्थिक क्षेत्र को पूरी तरह ग्रस लिया है। राजनीतिज्ञों के कुत्सित खिलवाड़ के कारण देश की आर्थिक स्थिति

बराबर बिगड़ती चली गयी है। उनके संरक्षण में प्रशासनिक अधिकारी और व्यापारी वर्ग ने देश की आर्थिक स्थिति को पूरी तरह खोखला बना दिया है। 'अर्थब्रह्म' में जोशीजी ने इस स्थिति पर विचार किया है। मनी-मार्केट के संबंध में वे लिखते हैं, इसकी एक पोजीशन होती है, जो टाइट चलती है। लोग बोलते हैं, आजकल मनी-मार्केट की पोजीशन टाइट चल रही है। यह बात बड़े-बड़े पैसे वाले बोलते हैं, जो कहीं से टाइट नजर नहीं आते।

स्वातंत्र्योत्तर काल में देश के नेता समाजवाद को सिद्धांतों के आधार पर पंचवर्षीय योजना को चलाने और देश को आत्मनिर्भरता की दिशा में ले जाने का दावा बराबर करते रहे। परंतु असलियत में देश की आर्थिक नीति को अमेरिका जैसे पूंजीवादी देश तथा उनके पिट्ठू भारत के पूंजीपति नियंत्रित करते रहे। फलतः देश की पर-निर्भरता पूंजीवादी देशों पर बढ़ी है। 'उधार का अनंत आकाश' में जोशीजी ने भारत के उधार लेने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य कसते हुए लिखा है, "उधार लेने वाला अन्वेषी होता है और अन्वेषी ही उधार ले सकता है। हमारे देश के वित्त मंत्रालय को कोलम्बस की प्रतिमा लगानी चाहिए। वह अमेरिका नहीं खोजता तो हम कहां से कर्ज लेते।"**17** शरद जोशी की सूक्ष्म अवलोकन शक्ति से कोई नहीं बच पाया है। समाज में नाना प्रकार के लोग होते हैं। उन्हीं में से 'अध्यक्ष महोदय' भी होते हैं। इनके चरित्र पर प्रकाश डालते हुए शरद जोशी लिखते हैं, "अध्यक्ष प्रायः गंभीर किस्म का प्राणी होता है या उसमें यह भ्रम बनाए रखने की शक्ति होती है कि वह गंभीर है। अच्छा अध्यक्ष हमेशा देर से आता है। अच्छे अध्यक्ष रेडीमेड होते हैं। वे किसी भी विषय पर बोल सकते हैं। अच्छे अध्यक्षों की यह अदा है कि प्रमुख वक्ता से असहमत हो जाते हैं। वे भाषण के अंत तक असहमत बने रहते हैं, जबकि वे जानते हैं कि मैं गलत बात कह रहा हूं। अध्यक्ष बनने के कई तरीके होते हैं। कुछ चौंककर अध्यक्ष बनते हैं, कुछ सहज अध्यक्ष बन जाते हैं, कुछ दूल्हे की तरह लजाते-मुस्कराते अध्यक्ष बनते हैं। कुछ यो अध्यक्ष बनते हैं जैसे शहीद होने जा रहे हों। कुछ हेडमास्टर की अदा से अध्यक्ष बनते हैं और कुछ ऐसे सिर झुकाए बैठे रहते हैं कि जैसे मंडप में लड़की का बाप बैठता है। कुछ अध्यक्ष वक्ताओं को निरंतर आश्चर्य से देखते रहते हैं कि आखिर वह क्या कह रहा है, क्यों कह रहा है और कब तक कहेगा।"**18**

इस देश का सर्वाधिक सत्यानाश भाषणबाजी ने किया है। अल्पजानकारी रखने वाला व्यक्ति भी अपने आपको श्रेष्ठ वक्ता समझता है। आजकल सभी सुनाने में लगे हुए हैं। सुनने को कोई तैयार नहीं है। ऐसे ही कुछ पेशेवर वक्ता होते हैं जो कहीं भी, किसी भी क्षण, किसी भी विषय पर अपने विचार तुरंत प्रकट कर देते हैं और तालियों की फसल काट लेते हैं। जोशीजी ने ट, ठ, ड अथवा ढ पर भाषण निबंध में इसी पर व्यंग्य कसा है। "आप भाषण देने खड़े हों, ऐसे कि मानों आप पर बहुत कुछ लदा है। हाथी की चाल से धीरे-धीरे मंच तक पहुंचे। एक क्षण के लिए उस महापुरुष की हार से ढंकी तस्वीर की ओर देखें और फिर उपस्थित श्रोताओं की ओर, फिर अध्यक्ष को कनखी से देख धीरे से कहें, अध्यक्ष महोदय, बहनो और भाइयो! एक क्षण चुप रहें थूक निगलें, हाथ पीठ पर बांधे, झुक कर अपने

पैर के अंगूठे की ओर देखें और कहें कि आज हम सब एक ऐसे महापुरुष का जन्मदिन या जो भी दिन हो, मनाने के लिए एकत्र हुए हैं जो आज हमारे बीच नहीं हैं। जाहिर है तभी यह सभा है, नहीं तो काहे को होती।"**19** एक सर्वमान्य फार्मूले में किसी भी महापुरुष के संबंध में एक घंटे तक बोला जा सकता है। अन्य वक्ताओं का हवाला देकर मूल बात पर आने से बचा जा सकता है। उनके युग में उनकी आवष्यकता का प्रतिपादन जोरदार ढंग से किया जा सकता है। उस महापुरुष को किसी एक जाति, एक प्रांत या एक देश न बताकर पूरी मनुष्य जाति के लिए उनका उपयोग था, यह बोला जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों पर फिल्मों के असर को शरद जोशी ने चुटीले अंदाज में अभिव्यक्त किया है। एक संवाद में फिल्म का प्रभाव बताते हुए जोशीजी ने लिखा है, "मैंने उनसे बातें की तो वे बोलीं - बाबू आजकल यही फैशन है, बड़ी बालियों का या लम्बे इयरिंगों का। तुम मुझे बाबू क्यों कहती हो ? क्या मैं तुम्हें बाबू लगता हूं।" "हमने फिल्मों में देखा कि गांव की लड़कियां परदेश से आए व्यक्ति को बाबू कहती हैं। हमने इसलिए कहा। और उनमें से एक लड़की ने फिल्मी हिरोइन की नकल करते हुए सुरीली आवाज में कहा - ओ परदेसी बाबू।"**20** इस आधुनिकता ने वेशभूषा को भी नहीं छोड़ा। गांव में पहनी जाने वाली पोशाखें अब बीते जमाने की बात हो गयी है। ग्रामवासियों की इस स्थिति का वर्णन करते हुए जोशीजी ने लिखा है, "मैं खेतों के पास से चला जा रहा था तो मैंने उन्हें मिनी साड़ियों में देखा। उनकी चोलियां कसी हुई थीं, पीठ, कमर और एक कंधा खुला हुआ था। साड़ी घुटनों के ऊपर थी। "यह कैसी पोशाख है ? मैंने पूछा।

जनबा यह मिनी साड़ी है। लेटेस्ट फैशन है। अब वैसी लम्बी साड़ियां और पूरी बाहों के ब्लाउज का रिवाज नहीं रहा।"**21**

आधुनिकता का एक नमूना और देखिए - "मैंने एक प्रेम भी किया। लड़की जल्दी पट गयी। उसने मुझसे कहा कि हमें कहीं मिलकर वक्त बिताना चाहिए। तुम्हारा घर कैसा रहेगा, जब माता-पिता न हों ?" "उफ्, तुम कैसे हो। बिलकुल पुराने जमाने के। घर में घुसकर, छिपकर , प्रेम करने वाले। पता नहीं कैसे लोग प्रेम करते होंगे। चलो खेत पर चलें, पुआल और घास के ढेर पर खुले आकाश के नीचे।.....गांव मार्डन हो रहा है। उसे वे पुराने घरघुस प्रेम के विक्टोरियन तौर तरीके पसंद नहीं। हिप्पी ढंग से वे सब कुछ खुले में कबूल करते हैं।"**22** शरद जोशी की पैनी दृष्टि से कोई नहीं बच पाया है। एक और जहां उन्होंने 'अतिथि तुम कब जाओगे' के माध्यम से सामाजिक संबंधों की बखिया उधेड़ी है वहीं दूसरी ओर शिक्षा क्षेत्र में व्याप्त अनेकानेक विडंबनाओं की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित किया है। साहित्यिक क्षेत्र की उठा-पटक को शरद जोशी ने जितनी शिद्दत से महसूस किया है, उतना और किसी ने नहीं। सार्वजनिक कवि सम्मेलनों में गद्य से व्यंग्य कहने के एकमात्र वे अधिकारी थे। उन्हें सुनने के लिए लोग देर रात तक बैठे रहते। जोशीजी लिखते हैं, "हिन्दी साहित्य एक मटका है और हम सब उसके भावी अचार और मुरब्बे हैं, जिसे भविष्य में कभी-कभी चखने के लिए सुरक्षित रखा जाता है। अचार बने रहने में ही अमरता

है।"**23**

हिन्दी में लिखने वाले की मृत्यु के बाद होने वाली दुर्दशा की कल्पना भी जोशीजी ने की है। वह बिलकुल यथार्थ है। मृत्यु हो जाने पर कई लोग एक साथ उसकी रचनाओं पर टूट पड़ते हैं। लेखक के न चाहने पर भी उसकी रचनाओं की चीर-फाड़ प्रारंभ हो जाती है। "तुम पर तो एक पीएच.डी. पकेगी। खूब आये हाथ में।" वृद्ध कहते हैं। वह युवक मेरा गला दबाता है। "मैं करूंगा, मैं करूंगा इस पीएच.डी. को। बड़ा कागज रंगा है इसने। हो जाये साले पर एक पीएच.डी.।

मुझे नहीं पता था कि यह भवन विश्वविद्यालय है और यह वृद्ध हिन्दी का हेड आफ दि डिपार्टमेंट। मैं टेबुल पर मृत पड़ा हूं। मेरा सिर मेरे दुर्बल शरीर से अलग कर दिया गया है। वे मेरी जांच कर रहे हैं और नोट्स बना रहे हैं। "शैली पर पाश्चात्य प्रभाव है। भाषा मुहावरेदार है। हास्य में व्यंग्य का पुट है। नहीं। व्यंग्य में हास्य का पुट है। कथ्य में थोड़ा-सा यथार्थवाद टपकता है। ब्राह्मणकुल में जन्मा है, पर सुधारवादी प्रतीत होता है। भाषा में ओज नहीं है। और प्रसाद गुण। यदा-कदा दृष्टिगोचर होता है। विश्वविद्यालय भवन के बाहर मेरे पीछे दौड़ने वाले साहित्यकार रुककर खड़े हो गए हैं। श्री सीताराम रहस्य तरंगिणी और मिथिला विलास के कवि जनकराज किशोरीरमण रसिक अली स्वयं सीढियां चढ़कर आये हैं और हेड ऑफ़ डिपार्टमेंट से कह रहे हैं कि आप पीएच.डी. करवाय के मुर्दा हिन्दी साहित्य के इतिहास को सौंप दीजिए।"**24**

साहित्यकार होना अपने आप में बहुत बड़ी विडम्बना है। समाज में उसे प्रतिष्ठा, सम्मान प्राप्त नहीं है जितना अन्य लोगों को प्राप्त होता है। कोई व्यक्ति लेखक है या कवि है तो मानो वह कोई पूर्वजन्म में किए गए पाप का प्रायश्चित्त कर रहा हो। आज साहित्य के नाम पर ऐरेगैरों ने जो कुछ भी लिखा है उसकी वाहवाही हो रही है और जो अपनी देह को साहित्य सेवा में खपा देते हैं वे मूर्ख कहे जाते हैं। स्वयं हिन्दी साहित्य में ही ऐसे लोग हैं जो किसी व्यक्ति को लोकप्रिय होता नहीं देख सकते। जोशीजी ने इस पीड़ा को स्वयं भोगा है। हिन्दी साहित्य के भीतर चलने वाली राजनीति ने जोशीजी को बहुत गहरे तक प्रभावित किया था। इस क्षेत्र की समस्त विसंगतियों को उन्होंने 'धर्मयुग' पत्रिका के आत्मकथ्य अधिवेशन विषय में खोलकर रख दिया है। उन्होंने लिखा, "हिन्दी में लेखक होने का अर्थ है, निरंतर उन निगाहों द्वारा घूरे जाना, जो आपको अपराधी समझती हैं। साहित्य में या महज जीवन जीने के लिए आप कुछ कीजिए वे निगाहें आपको लगातार यह एहसास देंगी कि आप गलत हैं, घोर स्वार्थी हैं, हलके हैं आदि। हिन्दी में लिखने का अर्थ निरंतर प्रहारों से सिर बचाना है, बेशर्मी से। मेरा कसूर यह है कि लोग मुझे पढ़ते हैं। हिन्दी में पठनीय साहित्य, साहित्य नहीं होता। वह कुछ भ्रष्ट और सतही-सी चीज होता है। मैं बहुत शुरू से उन पत्र-पत्रिकाओं में लिखने लगा, जिनकी बिक्री ज्यादा थी, जो ज्यादा पाठकों से जुड़ती थी। साहित्य के मठाधीश यह

आग्रह करेंगे कि आपका लेखन जनता से जुड़े। पर यदि आप ऐसी पत्रिका में लिख रहे हैं जो ज्यादा बिकती है, तो वे आप पर नाक-भौं सिकोड़ेंगे। हिन्दी में लोकप्रिय होना अपराध है। जो नहीं पढ़े जाते, वे ही लेखक हैं और जो नापसंद किए जाते हैं वे बेहतर लेखक हैं। यहां तक भी ठीक है। पर जो पढ़े जाते हैं वे लेखक हैं ही नहीं। जो कवि मंच पर पढ़ता है, वह कवि नहीं। दिल्ली के हाल में कुछ लोगों को जमा करके अपनी कविताएं अज्ञेय भी पढ़ते हैं, पर यदि वही हाल कुछ और चौड़ा हो जाए, सुनने वालों की संख्या चौगुनी हो जाए और कोई कवि पढ़ रहा हो, प्रशंसा पा रहा हो, तो वह कवि नहीं है। किसी भी भाषा में लेखक का समाज से जुड़ना घटिया प्रवृत्ति नहीं समझी जाती, सिवा हिन्दी के।"

मैं व्यावसायिक लेखक हूं, अतः घटिया हूं। साहित्य वाले मेरी रचना नहीं पढ़ेंगे। चूंकि मैं व्यावसायिक पत्रों में नियमित लिखकर कमाता हूं, अतः मैं कोई दरजा नहीं रखता। दर्जेदार वे हैं, जो विश्वविद्यालय की पीठ पर विराजमान हो, बिना पढ़ाये मुफ्त का पैसा झाड़ साहित्य और साहित्यकार पर फतवे देते हैं। पद, पुरस्कार और पद्मश्री तक सारा कुछ बटोरने के उपक्रम में सरकार के विरुद्ध लिखने से कतरा कर मार्क्सवादी बनते हैं। अपनी तुलना कबीर से करेंगे और अपनी चदरिया मुख्यमंत्री के चरणों में बिछाये रखेंगे। शिखर पुरस्कार लेने के लिए जमीन पर बिछ जाएंगे। सरकार से खरीदी करवा देने के लालच दे, छुटभैयों से अपने पर किताब पर लिखवायेंगे। ग्रंथावली पर जुगाड़ जमायेंगे। लेखक के नाते मैं इस देश की किसी भी दुष्प्रवृत्ति पर कमेंट कर सकता हूं पर हिन्दी में चलने वाली इन दुष्ट गतिविधियों पर नहीं। फौरन सरलीकरण हो जाएगा। जोशीजी को पुरस्कार नहीं मिला ना, इसलिए जलते हैं। सरकार ने जोशीजी की किताब नहीं खरीदी इसलिए दुखी हैं। आप जरा सच बोल दीजिए, फौरन सुनने को मिलेगा फ्रस्ट्रेटेड हैं। इनकी कुंठाएं बोल रही हैं। हिन्दी में लेखक होने का अर्थ पता नहीं ऐसे कितने सरलीकरणों को होना है।"**25**

निष्कर्ष

'यथासंभव' का निरीक्षण करने के बाद इसमें संदेह नहीं रह जाता कि वर्तमान परिस्थितियां कितने विकट रूप में विकृत हो गयी हैं। इन परिस्थितियों के निर्माण, होने देने में अगर राजनीति केा मूल में माना जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। राजनैतिक विसंगतियों से प्रेरित रचनाओं में राजनेताओं एवं नौकरशाहों के भ्रष्टाचार, स्वार्थ, महत्वाकांक्षा, अवसरवाद, चरित्रहीनता, भाई-भतीजावाद, पाखण्ड और मुखौटे आदि के लिए जनहित के संदर्भ में उनकी सतत निष्क्रियता पर जोशीजी ने तीखे व्यंग्य किए हैं। उन्होंने अपने संग्रह 'यथासंभव' से समाज की विसंगतियों की ओर आम आदमी का परिचय कराने का यथासंभव प्रयास किया है। अपने रचनाकर्म की प्रतिबद्धता को बताते हुए जोशीजी लिखते हैं, "मेरा इरादा तो यह है कि जिसे मैं ठीक नहीं पाता हूं उसे अपने लेखन के जरिये शर्म के उस बिंदु तक ले जाऊं कि वह अपना गलत स्वीकार कर ले। और फिर पूरी निश्छलता के साथ लौट आये। जब तक व्यंग्य रचना निर्भीक होकर नहीं की जाती, तब तक सफल व्यंग्य लेखक नहीं बना जा सकता। छापने वाले

और पढ़ने वाले तो तैयार है, साफ-साफ लिखने की आदत होना चाहिए।

संदर्भः

1 गद्य के विविध आयामः माजदा असदः पृष्ठ 26
2 गद्य के विविध आयामः माजदा असदः पृष्ठ 27
3 मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएंः नरेंद्र कोहलीः पृष्ठ 8
4 काहे की आत्मा कैसा कथ्यः धर्मयुग 10 मार्च 1985: शरद जोशी : पृष्ठ 40
5 यथासंभव इस झूठी खबर को फेलने से रोकोः नईदुनियाः यशवंत व्यासः 6 दिसम्बर 1991
6 भैसन्हि मांह रहत नित बकुलाः यथासंभवः शरद जोशी : पृष्ठ 17
7 जैसे श्वान कांच मंदिर मेंः यथासंभव : पृष्ठ 21
8 चुनाव गीतिका सरलार्थः यथासंभव : पृष्ठ 389
9 खूब गुजरे ये वर्षः यथासंभव : पृष्ठ 71
10 जीप पर सवार इल्लियां :यथासंभव : पृष्ठ 49
11 मटका प्रसंग : यथासंभव :पृष्ठ 95
12 मटका प्रसंगः यथासंभव :पृष्ठ 95
13 मटका प्रसंगः यथासंभव : पृष्ठ 94
14 हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारेः यथासंभव :पृष्ठ 23
15 सरकार का जादूः यथासंभव :पृष्ठ 39
16 हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे : यथासंभव :पृष्ठ 25
17 उधार का अनंत आकाश : यथासंभव : पृष्ठ 162
18 अध्यक्ष महोदय : यथासंभव : पृष्ठ 175
19 ट,ठ,ड, अथवा ढ पर भाषण : यथासंभव :पृष्ठ 141
20 गांव, कस्बा और आधुनिकता : यथासंभव :पृष्ठ 193
21 वही
22 वही पृष्ठ 195
23 अमरता के एहसास की भयावनी रात : यथासंभव :पृष्ठ 257
24 अमरता के एहसास की भयावनी रात : यथासंभव :पृष्ठ 257
25 धर्मयुगः आत्मकथ्य अधिवेशन : शरद जोशी : 10 मार्च 1985: पृष्ठ 40